

Date: 27-08-18



THE TIMES OF INDIA

Don't copy Trump on trade

India will hurt itself most by setting up protectionist tariff barriers

TOI Editorials



With President Trump dominating the political discourse on trade, there is increasing pressure on the government from India Inc to erect import barriers and support domestic manufacturing, which has been struggling to compete with cheaper imports from countries such as China. If the US – traditionally the staunchest advocate of free trade – thinks that restricting imports will help its economy then India must go the same way, or so goes the argument. Due to upcoming elections the ruling political dispensation led by Prime

Minister Narendra Modi is under serious pressure to revive private investment, ramp up economic growth and create jobs.

There is no shortage of people – both in government and the private sector – who think that by checking imports, India can push indigenous manufacturing and create enough jobs for its rapidly growing army of young and restless job seekers. In the pre-1991 era, many business tycoons got used to enjoying virtually no competition from cheaper and better quality imported merchandise. They fancy a return to the good old days of protected markets and monopolistic rent. For them, Trump's recent tariff actions followed by Chinese counter measures provide the much-needed context for India to justify its own version of protectionism.

Thus, India has been raising import duties starting with items such as steel followed by automobile parts and components, footwear and toys. Given the cosy nexus of big businesses with top bureaucrats and politicians irrespective of party affiliations, more such hikes in import duties are likely to creep in. But if any country should know about the perils of protectionism, it is India. We can't really discount the economic damage caused by decades of import restrictions that former Prime Minister PV Narasimha Rao's government tried to dismantle with limited success. Even that limited success in dismantling the control raj has given a big boost to India's economic growth prospects.

Despite increasing support among Indians for copying Trump's trade tactics, duty hikes will create an inefficient industrial structure that will backfire on India. It will raise the cost for downstream industries, penalise exports, limit consumers' choices and worse, it may trigger retaliation from trade partners who expect to lose from tariff hikes. In today's world, industrial production is a multi-location phenomenon. Thus, any increase in tariffs will further drive India out of regional and global production networks, which require seamless movement of components and parts across borders several times during the production process.

India learnt the hard way, during its licence-quota raj, that raising import barriers penalises exports. Protected markets make domestic businesses focus inward, making them complacent about cutting cost or upgrading quality. As a result, exporting domestically produced goods becomes increasingly difficult in an intensely competitive global market place. Domestic consumers too lose in the process, from a lack of choice and poor product quality that often comes at relatively higher prices – the characteristics of a typical captive market. This has been India's major lesson from pursuing socialist economic policy for over four decades.

The evidence from abroad, including the US, is also not supportive of mercantilism. An earlier import duty hike on steel products in March 2002, by former US President Bush didn't work and had to be withdrawn by December 2003. India's own experience is not much different. Last year, increase in duties and imposition of minimum import prices (MIP) led to a surge in domestic steel prices and the government had to warn steel companies not to keep prices above Rs 40,000 rupees a tonne, which adversely affected consuming downstream industries.

Besides, retaliatory trade action could harm India's growth prospects by shrinking the size of overseas markets, as its domestic market is not large enough to let Indian businesses realise economies of scale or be able to absorb a million a month new job seekers who're joining the country's workforce. As for the US, it's worth remembering that even industries Trump says he is supporting are now opposing him, for instance, automobile manufacturer General Motors. This is not to argue that Indian businesses are not disadvantaged. They are – but that's mostly because of internal factors such as inefficient logistics, business unfriendly border and customs procedures and a series of poor sectoral regulations ranging from healthcare to textiles that jack up the cost of doing business, discourage value added production and drive away entrepreneurs. India should focus its attention on addressing the internal constraints that have been keeping its manufacturing sector inefficient.

There is no denying that an increase in import duties may provide some temporary respite, but in the end it will do more harm than good. The presence of a consensus based multilateral trade body like WTO has served India and other developing countries well both in seeking better market access or fighting unfair trade competition from countries such as China or the US. India should rather work with the EU and Japan to reform a WTO that is ineffective in tackling China's unfair trade practices. India must also expedite crucial trade pacts, in particular, those with the Eurasian Economic Union, the EU and Latin American trade bloc Mercosur to find alternative export destinations and somewhat compensate for likely losses in traditional export markets. This is also the time to persuade a China targeted by Trump's trade war to be more willing to allow Indian merchandise, especially farm produce and pharmaceuticals, into its large domestic markets.

Date: 26-08-18

राष्ट्रीय
सहारा

बिम्सटेक को सार्थक बनाएं

डॉ. दिलीप चौबे



प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी नेपाल की राजधानी काठमांडू में अगले सप्ताह 30-31 को होने वाले चौथे बिम्सटेक शिखर सम्मेलन में भाग लेने जा रहे हैं। इसकी स्थापना 6 जून 1997 को हुई थी। बंगाल की खाड़ी के तटवर्ती देशों के बीच तकनीकी और आर्थिक सहयोग बढ़ाना इसका मुख्य लक्ष्य रहा है। लेकिन इन दो दशकों के बाद भी वास्तविक अर्थों में यह संगठन अपनी मंजिल से कोसों दूर रहा। लेकिन भारत, पाकिस्तान, अफगानिस्तान, बांग्लादेश, भूटान, नेपाल, मालदीव और

श्रीलंका के सदस्य देशों वाले दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन (दक्षेस/सार्क) की प्रासंगिकता संदिग्ध होने के कारण बिम्सटेक से आशाएं बढ़ गई हैं। इसलिए कूटनीतिक क्षेत्र में इस बात की चर्चाएं होने लगी हैं कि बिम्सटेक को दक्षेस का विकल्प बनाया जा सकता है और इसमें भारत को महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह करना चाहिए। बिम्सटेक दक्षिण एशिया और दक्षिण एशियाई देशों के बीच सेतु की तरह है। यह सात देशों का संगठन है, जिसमें भारत, नेपाल, बांग्लादेश, भूटान और श्रीलंका दक्षिण एशिया का प्रतिनिधित्व करते हैं और दक्षिण-पूर्व एशिया से थाईलैंड और म्यांमार।

ये सभी देश आर्थिक विकास की राह में आतंकवाद को एक बड़ा खतरा और अवरोधक मानते हैं। किसी न किसी रूप में ये देश आतंकवाद से पीड़ित भी हैं। जाहिर है कि नेपाल में होने वाले इस शिखर सम्मेलन में आतंकवाद केंद्रीय मुद्दा है। प्रधानमंत्री मोदी पिछले चार वर्षों के दौरान विश्व मंच पर आतंकवाद के मुद्दे को जोर-शोर से उठाते रहे हैं। सीमा पार आतंकवाद के बढ़ते खतरों के कारण ही भारत ने 2016 में पाकिस्तान में आयोजित सार्क सम्मेलन का बहिष्कार किया था। इसके कारण यह सम्मेलन नहीं हो पाया। इस साल भी पाकिस्तान में सार्क सम्मेलन आयोजित करने की तैयारियां चल रही हैं, लेकिन उम्मीद कम ही है कि भारत इसमें शिरकत करेगा। अगर पाकिस्तान आतंकवाद के मसले पर कोई दो टूक फैसला नहीं करता है तो दक्षेस पूरी तरह अप्रासंगिक हो जाएगा। भारतीय कूटनीति की सूझ-बूझ और दूरदर्शिता ही थी कि उसने अक्टूबर 2016 में गोवा में आयोजित ब्रिक्स सम्मेलन में बिम्सटेक के राष्ट्राध्यक्षों को आमंत्रित करके इन दोनों संगठनों के सदस्य देशों के आपसी रिश्ते प्रगाढ़ करने का अवसर उपलब्ध कराया था।

आतंकवाद का समर्थन करने या वित्त पोषित करने के गुनाह में पाकिस्तान को नियंत्रण बिरादरी से अलग-थलग करने के लिए बिम्सटेक के लक्ष्यों को विस्तार देना होगा। यह निराशाजनक है कि इस क्षेत्र में व्यापारिक गतिविधियों को बढ़ाने के लिए मुक्त व्यापार समझौते पर सदस्य देशों के बीच सहमति अभी तक नहीं बन पाई है। यह तब है, जबकि समूचा यूरोप अपने महादेशीय देशों में इस पण्जाली को लागू किये हुए है, जो उदारीकरण का मूल है। वहीं दूसरी तरफ, म्यांमार

और थाईलैंड के बीच शुरु की गई संपर्क परियोजनाओं का काम भी पूरा नहीं हुआ है। अगर बिम्सटेक को दक्षिण के विकल्प के रूप में स्थापित करना है तो लाजिमी है कि भारत को इन मसलों पर तेजी से कदम उठाने होंगे। चीन भी इस क्षेत्र में जरूरत से ज्यादा सक्रिय है। इसलिए भारत को भी पड़ोसी देशों के साथ मजबूत रिश्ते बनाने के लिए बिम्सटेक को सफल बनाना होगा।

Date: 26-08-18

यह तो नकल की सियासत है

हरिमोहन मिश्र

देश में लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं और संवैधानिक मर्यादाओं पर लगातार चोट से चिंतित लोगों का ध्यान जरूर उन दो घटनाओं पर भी गया होगा, जो इस प्रवृत्ति से लोहा लेने के बदले सियासी समर्पण की ओर इशारा कर रही हैं। लिहाजा, उनके असर भी गहरे हो सकते हैं। एक है हाल ही में समाजवादी पार्टी के मुखिया अखिलेश यादव का वह बयान कि वे जीते तो उत्तर प्रदेश के इटावा या बुंदेलखंड में भगवान विष्णु के नाम का एक शहर बसाएंगे और कंबोडिया के अंगकोर वाट जैसा मंदिर बनाएंगे। दूसरा, सबसे चिंताजनक पंजाब की अमरिंदर सिंह सरकार का वह प्रस्ताव है कि धार्मिक ग्रंथों को अपवित्र करने वालों को उम्रकैद की सजा दी जाए। ये दोनों ही बहुत संभव है मौजूदा राजनैतिक चुनौतियों की प्रतिक्रिया का नतीजा हों। लेकिन क्या इनसे हमारी लोकतांत्रिक और संवैधानिक मर्यादाएं नहीं टूटती हैं? क्या हम फिर उसी ओर नहीं लौट रहे हैं, जिन मसलों से हमें हमारे स्वतंत्रता संग्राम के महानायक और संविधान निर्माता आगे ले आए थे और एक उदार समावेशी लोकतंत्र की हमें सौगात दी थी? जाहिर है, अखिलेश यादव का बयान उत्तर प्रदेश के उप-मुख्यमंत्री केशवचंद्र मोर्य के अयोध्या में राम मंदिर वाले बयान की प्रतिक्रिया में आया था।

मौर्य ने कहा था कि जरूरत पड़ी तो संसद में हमारा पूर्ण बहुमत होने पर राम मंदिर के लिए विधेयक लाया जा सकता है। उनका संकेत यह था कि अभी शायद ऐसा संभव नहीं है, खासकर राज्य सभा के मामले में। अखिलेश यादव की यह जवाबी प्रतिक्रिया भाजपा की मंदिर राजनीति की तात्कालिक चतुर काट तो कही जा सकती है। लेकिन इसमें जोखिम भी हैं। यह तो दूसरे के पाले में जाकर राजनीति करने जैसा है। फिर, मंदिर की ये राजनैतिक प्रस्तुतियां राज्य की ताकत के इस्तेमाल पर खड़ी की जा रही हैं, जो उसके धर्मनिरपेक्ष ढांचे पर चोट जैसी हैं। हमारा संवैधानिक लोकतांत्रिक राज्य “सर्व धर्म, सम भाव” पर आधारित है मगर राज्य की सत्ता सिर्फ लोक कल्याणकारी कामों में होनी चाहिए। संविधान के नीति-निर्देशक तत्वों में स्पष्ट संकेत हैं कि हमें किस समतामूलक, सबके लिए सम्मानजनक व्यवस्था की ओर बढ़ते जाना है। जाहिर है, समतामूलक सामाजिक न्याय वाले समाज के निर्माण की प्रतिश्रुति अभी अधूरी है। इसलिए कथित भावनात्मक मुद्दों की ओर वापसी से हमारी लोकतांत्रिक राजनीति में सहजता तो कतई नहीं आएगी, बल्कि इसमें असहजता, उन्माद, अतिरेक जैसे नजारे दिखेंगे, जिसके उदाहरण मौजूदा दौर में भरे पड़े हैं।

ऐसे मुद्दों से निपटने के लिए कोशिश यह होनी चाहिए कि उन मुद्दों पर बात की जाए, जो लोगों को ज्यादा दुख दे रहे हैं। महंगाई, बेरोजगारी, अर्थव्यवस्था की बुरी हालत से आज देश पीड़ित है। लेकिन तथाकथित भावनात्मक मुद्दों से जूझने या उसका सियासी तोड़ निकालने के लिए अगर वैसे ही मसले उठाए जाएं या उससे और आगे बढ़कर कुछ किया जाए तो

यह सियासी भंवर खतरनाक होता जाएगा। ऐसे या कुछ ज्यादा ही खतरनाक सियासी भंवर की ओर बढ़ने का नमूना पंजाब में कांग्रेस की अमरिंदर सिंह सरकार पेश कर रही है। उसका प्रस्ताव दंड संहिता में धारा 295ए जोड़ने का है, जिसके तहत लोगों की “धार्मिक भावनाएं आहत करने की नीयत” से गुरुग्रंथ साहिब, भगवद्गीता, कुरान और बाइबिल को “अपवित्र करने, नुकसान पहुंचाने” वाले को उम्रकैद की सजा दी जाए। मुख्यमंत्री की दलील है कि यह राज्य में सांप्रदायिक सौहार्द कायम रखने के लिए जरूरी है। लेकिन सवाल यह है कि भारतीय दंड संहिता में धार्मिक भावनाओं को आहत करने से निपटने के लिए पहले से प्रावधान हैं तो इस नए की जरूरत क्यों पड़नी चाहिए।

उन्हीं प्रावधानों पर अगर अमल ढंग से किया जा सके तो इस बुराई से आसानी से निबटा जा सकता है। फिर कड़ी सजा देने का प्रावधान भी अतिरेक की ओर ही इशारा करता है। दरअसल, अमरिंदर सिंह ने पूर्व अकाली दल सरकार के 2016 के ऐसे ही विधेयक को नया रूप देने की कोशिश की है। लेकिन अमरिंदर जब सत्ता में आए तो उनका सबसे बड़ा वादा यह था कि पंजाब को नशे की बर्बादी से उबारकर नई राह पर ले आएं। अकाली सरकार में नशे की लत से पंजाब की युवा पीढ़ी पस्त हो गई थी। इसके नजारे फिल्म “उड़ता पंजाब” में भी दिखा। राज्य को नशे की लत से बाहर निकालने के लिए अमरिंदर सरकार ने अभियान भी चलाया है। लेकिन उससे उम्मीद के मुताबिक फायदे हासिल नहीं हो पा रहे हैं। वहां किसानों की समस्याएं भी विकट होती जा रही हैं। इसलिए अमरिंदर सरकार को शायद लगता है कि धर्म को लेकर भावनात्मक राजनीति से लोगों की नाराजगी कुछ शांत की जा सकती है। लेकिन इसके परिणाम भी भुगतने पड़ सकते हैं। यह वही खतरनाक राह है जिसके लिए पाकिस्तान की सही ही आलोचना की जाती है।

अमरिंदर का यह प्रस्तावित कानून भला पाकिस्तान के ईशनिंदा कानून से कमतर कहां है! अगर हम इसके दुरुपयोग की आशंकाओं को भी जोड़ लें तो यह और भी खतरनाक साबित हो सकता है। दरअसल, हमारे “सर्व धर्म सम भाव” वाले राष्ट्र और संविधान में राज्य की शक्तियों के इस्तेमाल में कई तरह के चेक और बैलेंस की व्यवस्था की गई है ताकि दुरुपयोग संभव न हो। लेकिन अमरिंदर सरकार के प्रस्तावित संशोधन के मजमून में चेक और बैलेंस का अभाव है इसीलिए इसके दुरुपयोग की आशंकाएं भी बढ़ती हैं। इन आशंकाओं के पार अमरिंदर की यह सियासत अकालियों के हाथ से मुद्दा छीनने के लिए सिर्फ गुरुग्रंथ साहिब तक ही सीमित नहीं है, बल्कि इसमें कुरान और बाइबिल के साथ भगवद्गीता को भी जोड़ लिया गया है, ताकि इसका धर्मनिरपेक्ष रूप दिखे। हिंदू धर्म के व्यापक विमर्श में ऐसी बातें कहीं नहीं मिलती हैं। वहां ये सब मुद्दे ही नहीं हैं। यह जरूर है कि हाल के दौर में संकीर्णताओं का दायरा बढ़ा है और हिंदू धर्म को भी उन्हीं कसौटियों पर कसा जाने लगा है, जिन्हें कभी संकीर्ण मानकर दूसरों की आलोचना की जाती रही है। इन्हीं संकीर्णताओं को लेकर तो हिंदुत्व और हिंदू धर्म दर्शन के बीच फर्क पर बहस कई हलकों में जारी है।

कांग्रेस अध्यक्ष राहुल गांधी भी हाल में यही कह रहे थे कि आरएसएस ने धर्म को संकीर्ण बना दिया है, जिस पर आरएसएस और भाजपा के तेवर काफी तीखे दिख रहे हैं। लेकिन, धार्मिक संकीर्णता की राजनीति के विरोध में खड़े लोग भी अगर उसी मैदान में घुसेंगे तो बिलाशक वे संकीर्णताओं की दलीलों को मजबूत ही करेंगे। इसके नमूने अतीत में दिख भी चुके हैं। याद कीजिए राम मंदिर आंदोलन के पहले राजीव गांधी की सरकार ने ही अयोध्या में बाबरी मस्जिद का ताला पूजा-अर्चना के लिए खोलने की पहल की थी। राजीव सरकार ने यही नहीं किया, हिंदुओं को खुश करने के बाद शाहबानो प्रकरण से वह मुसलमानों को भी खुश कर लेना चाहती थी। लेकिन उसके दोनों ही दांव उलटे पड़े। उससे संकीर्णतावादी राजनीति को ही फायदा मिला। इसलिए संकीर्णताओं और भावनात्मक मुद्दों की काट और वास्तविक मुद्दों की स्थापना के लिए वैकल्पिक नीतियों और बहस की जरूरत होगी। उदार और गंभीर बहसों और जीवन से जुड़े मसलों, न्याय-अन्याय, घपलों-घोटालों पर ही बात करके संकीर्णताओं से लड़ा जा सकता है। बहरहाल, हमेशा यह ध्यान में रखना

चाहिए कि हमारे संविधान और लोकतंत्र की यह प्रतिश्रुति है कि अधिक से अधिक उदार और स्वतंत्र विचारों को ही आगे बढ़ाया जाए। कम से कम पंजाब सरकार से यह आग्रह तो किया ही जाना चाहिए कि वह अपने कथित संशोधन से बाज आए या फिर उसमें ऐसे सख्त प्रावधान भी जोड़े कि उसका दुरुपयोग कतई संभव न हो।
